उद्धत अपार तव दुन्दुभी धुकार साथ
लंघैं पारावार बाल-वृन्द रिपुगन के।
तेरे चतुरंग के तुरंगन के अंग-रज,
साथ ही उड़ात रजपुञ्ज हैं परन के॥
दच्छिन के नाथ सिवराज! तेरे हाथ चढ़ैं,
धनुष के साथ गढ़ कोट दुरजन के।
भूषन असीसैं, तोहिं करत कसीसैं पुनि,
बानन के साथ छूटैं प्रान तुरकन के॥११३॥

शब्दार्थ—उद्धत=उग्र, प्रचंड। धुकार=ध्वनि, आवाज़। पारावार=समुद्र। चतुरंग=चतुरंगिणी सेना जिसमें हाथी, घोड़े, रथ और पैदल हों। रज=धूल, राज्यश्री। अंगरज=शरीर की धूल, सुमों की धूल। परन=दूसरों, शत्रुओं। कसीसैं=कशिश करते ही, कर्षण करते ही, खींचते ही।

अर्थ—हे दक्षिण के नाथ, महाराज शिवराज! तुम्हारे नगाड़ों की अति प्रचंड गड़गड़ाहट के साथ शत्रुओं के बाल-बच्चे (परिवार) समुद्र को लाँघ जाते हैं अर्थात् इधर चढ़ाई के लिए आपके नगाड़े बजे और उधर मुसलमान अपने बाल-बच्चों को अपने देश में भेजने के लिए समुद्र पार करने लगे। तुम्हारी चतुरंगिणी सेना के घोड़ों के सुमों की धूल के उड़ने के साथ ही शत्रुओं की राज्य-श्री का समूह भी उड़ जाता है अर्थात् ज्यों ही चढ़ाई के लिए उद्यत तुम्हारी सेना के घोड़ों के सुमों से धूल उड़ती है त्यों ही शत्रुओं के राज्य उड़ जाते हैं और तुम्हारे धनुष चढ़ाने के साथ ही दुर्जनों के किले भी तुम्हारे हाथ में चढ़ जाते हैं। फिर भूषण कवि आशीर्वाद देते हुए कहते हैं कि तुम्हारे धनुष की डोरी खींच कर बाणों के छूटने के साथ ही तुर्कों के प्राण छूट जाते हैं।

विवरण—यहाँ दुन्दुभि का बजाना, चतुरंगिणी-सेना का चढ़ाई करना, धनुष चढ़ाना और बाण छूटना आदि कारण और कुटुम्ब का समुद्र पार करना, राज्यश्री का उड़ना, किलों का जीता जाना तथा तुर्कों के प्राण छूटना रूपी कर्म एक साथ ही कथित हुए हैं, इसलिए यहाँ अक्रमातिशयोक्ति अलंकार है।